Dr. Vandana Suman
Associate Professor
Dept. of Philosophy
H. D. Jain College, Ara
M.A - II Sem Philosophy
CC-09 - Indian Linguistic trends

"Conception of Negation" 1

"निषेध"

भारतीय भाषाविश्लेषण के अन्तर्गत निषेध की समस्या एक प्रमुख समस्या है। साधारणतः निषेध पद नकारात्मकता का बोध कराता है। परन्तु नकार (अस्वीकार) उसी का सम्भव होता है जिसका भाव (अस्तित्व) होता है, अर्थात निषेध के सम्प्रत्यय को समझने के लिए भाव का सम्प्रत्यय भी जानना आवश्यक है। "जमीन पर घड़ा नहीं है" वाक्य में जमीन का भाव दिखलाया गया है और घड़ा का अभाव बतलाया गया है। घड़ा का अभाव का तात्पर्य है कि घड़ा की उपस्थिति का नहीं होना। घड़ा की उपस्थिति घड़ा का भाव है। अतः अभाव का अर्थ भाव का निषेध (अस्वीकार) है। तात्पर्य है कि भाव और अभाव दोनों पद विरोधी होते हैं, बल्कि एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। एक को दूसरे में परिवर्तित किया जा सकता है। जैसे - "घड़ा है" को 'घड़ा का अभाव नहीं है' - वाक्य में बदला जा सकता है। "घड़ा है" भावात्मक वाक्य है, लेकिन "घड़ा का अभाव नहीं है।" निषेधात्मक वाक्य है। परन्तु दोनों वाक्यों का अर्थ एक ही है - घड़ा का होना अर्थात घड़ा का भाव। इसी तरह "घड़ा नहीं है" वाक्य को "घड़ा का अभाव (घटाभाव) है।" में बदला जा सकता है। "घड़ा नहीं है।" वाक्य निषेधात्मक है, जबकि "घड़ा का अभाव है। भावात्मक वाक्य है।

स्पष्ट है कि भाव और अभाव में कोई विरोध नहीं है। अरस्तु के तर्कशास्त्र के अनुसार भावात्मक तर्कवाक्य का प्रतिवर्तन निषेधात्मक तर्कवाक्य में होता है, और निषेधात्मक तर्कवाक्य का प्रतिवर्तन भावात्मक तर्कवाक्य में होता है। अतएव भाव और अभाव को एक दूसरे में परिवर्तन (अरस्तु के प्रतिवर्तन) के समान है। फिर भी अभाव का ज्ञान इसके प्रतियोगी अर्थात भाव के बिना नहीं हो सकता। घड़ा का अभाव को तबतक नहीं जाना जा सकता, जबतक कि घड़ा क्या है को नहीं जाना जाता है। अर्थात घड़ा के भाव का ज्ञान होने पर ही घड़ा के अभाव का ज्ञान होता है। दूसरे शब्दों में अभाव का ज्ञान भाव के ज्ञान पर निर्भर करता है। लेकिन भाव का ज्ञान अभाव के ज्ञान पर निर्भर नहीं करता है। घड़ा का भाव घड़ा के अभाव पर निर्भर नहीं करता है। घड़ा का भाव घड़ा के अभाव पर निर्भर नहीं है जबकि घड़ा का नहीं होना (अभाव) घड़ा के होने (भाव) पर निर्भर करता है। वस्तुत: भाव स्वतंत्र है, जबकि अभाव परतंत्र है। जिस प्रकार संयोग और समवाय का ज्ञान सापेक्ष होता है इसी प्रकार भाव और अभाव का ज्ञान भी सापेक्ष है। संयोग और

भगवान की गुण का तक गुणी के बीच का सम्बन्ध है। ये सम्बन्ध तभी होते हैं जब दोनों पद वर्तमान हो जैसे - मदी और नाव का सम्बन्ध (संयोग) गेज और में जतत्व का सम्बन्ध (समवाय)।

परन्तु अभाव वह सापेक्ष ज्ञान है जिसमें भाव पदार्थ की अनुपस्थिति पायी जाती है। जैसे - घटाभाव का ज्ञान। यहाँ घड़ा की अनुपस्थिति का ज्ञान होता है। घड़ा, जो भाव पदार्थ है, घड़ा के अभाव को निरूपित करता है। इसलिए घड़ा को अनुयोगी और घड़ा के अभाव को प्रतियोगी कहा जाता है। अनुयोगी उसे कहते हैं जिसकी उपस्थिति रहती है। प्रतियोगी वह है जो अनुयोगी में अनुपस्थित रहता है। "चाय में चीनी नहीं है" वाक्य में चाय अनुयोगी है, क्योंकि चाय का भाव है। परन्तु चाय में चीनी का अभाव है। इसलिए चीनी प्रतियोगी है। इसप्रकार "जमीन पर घड़ा नहीं है" वाक्य में जमीन अनुयोगी और घड़ा प्रतियोगी है। जमीन का भाव है, घड़ा का अभाव है।

निषेध के तत्व — स्पष्ट है कि

1 निषेध का सम्प्रत्यय स्वतंत्र सम्प्रत्यय नहीं है बल्कि भाव-अभाव के रूप में युग्म का सापेक्ष सम्प्रत्यय

25 MON MAY

है। इस सम्प्रत्यय को समझने के लिए इसमें निहित तत्वों को जानना आवश्यक है। ये तत्व हैं — अनुयोगिता, प्रतियोगिता, अनुयोगितावच्छेदक धर्म, प्रतियोगितावच्छेदक धर्म तथा प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध।

(1) अनुयोगिता — निषेध भाव के बिना नहीं हो सकता। अतः निषेध का प्रथम तत्व अनुयोगिता है। यह वह आधार है जिसमें किसी वस्तु का अभाव पाया जाता है। "जमीन पर घड़ा नहीं है" के उदाहरण में 'जमीन' अनुयोगिता है। जमीन घड़ा के नहीं होने का आधार है। अतः जमीन का अर्थ है — जमीनयुक्त अनुयोगिता का अभाव (भूतलानिष्ठ अनुयोगिता का अभाव)। घड़ा के अभाव का ज्ञान जमीन में निहित है।

(2) प्रतियोगिता — भाव का नहीं होना अर्थात अभाव को प्रतियोगी कहते हैं। घड़ा का नहीं होना अर्थात घड़ा में निहित अभाव प्रतियोगिता है। इसलिए ऊपर के वाक्य में प्रयुक्त "घड़ा नहीं है" पद अर्थात घटाभाव का अर्थ है कि घड़ा से युक्त प्रतियोगिता का अभाव (घट निष्ठ प्रतियोगिता का अभाव)।

(3) अनुयोगिता वाच्छेदक धर्म — अनुयोगितावच्छेदक धर्म अनुयोगिता की वह विशेषता है जो

2015

अनुयोगी पद के अर्थ को स्पष्टतया से बतलाता है। जैसे ऊपर के उदाहरण में अनुयोगी पद 'जमीन' है। किन्तु 'जमीन' शब्द मात्र से स्पष्ट नहीं होता है कि संसार के सभी जमीन के विषय में कहा जा रहा है या किसी खास जमीन के विषय में। ऐसी स्थिति में "जमीन पर घड़ा नहीं है" का अर्थ स्पष्ट नहीं हो पाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए अनुयोगितावच्छेदक धर्म की सहायता लेनी पड़ती है। यदि जमीन का अर्थ सभी (सामान्य) जमीन हो, तो जमीन का तात्पर्य 'जमीनत्व' (भूतलत्व) होगा। यदि जमीन का अर्थ किसी खास (विशेष) जमीन हो, तो जमीन का तात्पर्य 'इस जमीनत्व' (एतद्भूतलत्व) होगा। कहने का तात्पर्य है कि एक वाक्य का कम-से-कम दो अर्थ है — (क) सभी जमीन पर घड़ा का अभाव है।
(ख) एक विशेष जमीन पर घड़ा का अभाव है।

(4) प्रतियोगितावच्छेदक धर्म — प्रतियोगितावच्छेदक धर्म प्रतियोगिता की वह विशेषता है जो प्रतियोगी [illegible] पद के अर्थ को स्पष्ट करती है। ऊपर के उदाहरण में

घट। प्रतियोगी पद है क्योंकि इसका अभाव अनुयोगी (जमीन) में है। यह स्पष्ट नहीं है कि सभी घड़ा का अभाव है या एक खास घड़ा का अभाव है। इस स्पष्टता के लिए प्रतियोगितावच्छेदक धर्म का प्रयोग किया जाता है। यदि घड़ा का अर्थ सभी (सामान्य) घड़ा से लिया जाय तो घड़ा का तात्पर्य (घटत्व होगा। यदि घड़ा का अर्थ एक खास (विशेष) घड़ा से लिया जाय तो घड़ा का तात्पर्य "एकदण्डघटत्व" होगा। अतः प्रतियोगितावच्छेदक धर्म की दृष्टि से उक्त वाक्य के कम-से कम दो अर्थ हैं—(क) जमीन पर सभी घड़ा का अभाव है। (ख) जमीन पर विशेष (खास) घड़ा का अभाव है।

(5) प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध :- किसी वाक्य में कम से कम दो पद होते हैं (I) अनुयोगी (II) प्रतियोगी। इन पदों के बीच सम्बन्ध पाया जाता है। चूंकि प्रतियोगी पद का अभाव अनुयोगी में रहता है, इसलिए यह सम्बन्ध प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध कहलाता है। प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध दो प्रकार का होता है— (I) संयोग (II) समवाय अतः उक्त

उदाहरण में जमीन और घड़ा का सम्बन्ध या तो संयोग सम्बन्ध होगा या समवाय सम्बन्ध इसलिए प्रतियोगितावच्छेदक सम्बन्ध को जानने से भी उक्त वाक्य के दो अर्थ होंगे

(क) संयोग सम्बन्ध से जमीन पर घड़ा का अभाव है।

(ख) समवाय सम्बन्ध से जमीन पर घड़ा का अभाव है।

स्पष्ट है कि किसी निषेधात्मक वाक्य के अर्थ को स्पष्ट रूप से जानने के लिए निषेध के [illegible] पाँच तत्त्वों की अनिवार्यता होती है। इन तत्त्वों के आधार पर "[illegible] घड़ा नहीं है" के [illegible] प्रकार [illegible]

(क) संयोग सम्बन्ध से सभी जमीन पर सभी घड़ा नहीं है।

(ख) संयोग सम्बन्ध से एक विशेष जमीन पर सभी घड़ा नहीं है।

(ग) संयोग सम्बन्ध से सभी जमीन पर एक विशेष घड़ा नहीं है।

(घ) संयोग सम्बन्ध से एक विशेष जमीन पर एक विशेष घड़ा नहीं है।

(च) समवाय सम्बन्ध से सभी जमीन पर सभी घड़ा नहीं है।

(छ) समवाय सम्बन्ध से एक विशेष जमीन पर सभी घड़ा नहीं है।

(ज) समवाय सम्बन्ध से सभी

है, जमीन पर एक विशेष को जाती है।

(ख) सामान्य सम्बन्ध से एक जमीन पर एक विशेष घड़ा होता है।

निषेध का अर्थ — निषेध की परिभाषा नहीं आती, तत्वों से स्पष्ट है कि निषेध भाव में अभाव का नाम है। परन्तु वैशेषिक दर्शन के अनुसार अभाव एक स्वतंत्र पदार्थ है। वैशेषिक दर्शन के प्रवर्तक कणाद ने मात्र छः पदार्थों का उल्लेख किया है। ये पदार्थ हैं — द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय। गुण और कर्म द्रव्य में ही निहित रहते हैं। सामान्य विशेष में निहित रहता है। द्रव्य में सामान्य पाया जाता है। इन सभी पदार्थों में सम्बन्ध पाया जाता है। इस सम्बन्ध के लिए समवाय की आवश्यकता पड़ती है। ये सभी छः पदार्थ भाव पदार्थ हैं जो स्वतंत्र होते हुए भी एक दूसरे से सम्बद्ध हैं। कणाद के बाद आनेवाले वैशेषिककारों ने माना कि जिस प्रकार भाव पदार्थ की सत्ता है उसी प्रकार अभाव पदार्थ की भी स्वतंत्र सत्ता है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार पदार्थ वह है जो अभिधेय और प्रमेय होता है। अभिधेय उसे कहते

है। जिसे त्याग किया जाता है वो जो भागयोग्य होता है। प्रमेय वह है जो ज्ञान का विषय होता है या ज्ञान का विषय बनने योग्य होता है। अभाव भागयोग्य और ज्ञानयोग्य दोनों है। अतः अभाव एक पदार्थ है। वैशेषिक दर्शन के अनुसार पदार्थ परमसत्ता है। इसलिए पदार्थ के रूप में अभाव भी परमसत्ता है। इस दृष्टि से अभाव का स्वरूप तात्विक होता है। दूसरे शब्दों में, वैशेषिक दर्शन के अनुसार निषेध एक तत्वमीमांसीय सत्ता है जिसे अभाव की संज्ञा दी जाती है। अभाव का तत्वमीमांसीय अर्थ है — अनुयोगी में प्रतियोगी की अनुपस्थिति। अनुयोगी भाव पदार्थ है, प्रतियोगी अभाव पदार्थ है। स्पष्ट है कि तत्वमीमांसीय दृष्टि से भी, अभाव स्वतंत्र सत्ता होते हुए भी भाव के बिना अस्तित्ववान नहीं हो सकता।

तत्वमीमांसीय अर्थ में निषेध अभाव का पर्याय है। परन्तु भाषा विश्लेषण की दृष्टि से निषेध का तात्पर्य उस निषेधात्मक तर्कवाक्य से है जिसमें उद्देश्य और विधेय के बीच मेल का सम्बन्ध नहीं होता है। "चाय में चीनी नहीं है" इस वाक्य में चीनी प्रतियोगी है और चाय अनुयोगी है। ये दोनों स्वतंत्र पदार्थ हैं। एक में दूसरे की अनुपस्थिति है। अतः यहाँ चीनी का नहीं होना

तत्वमीमांसीय अर्थ में निषेध है अर्थात यह अभाव का उदाहरण है परन्तु "यहाँ घड़ा नहीं है" वाक्य में "यहाँ" उद्देश्य और "घड़ा" नहीं विधेय है। उद्देश्य में विधेय की अनुपस्थिति दिखलायी गयी है अर्थात उद्देश्य (यहाँ) और विधेय (घड़ा) में मेल नहीं है। घड़ा का नहीं होना निषेध है। यह निषेध तर्कवाक्य की व्याप्ति से होता है। अतएव "यहाँ घड़ा नहीं है" वाक्य में जिस निषेध का प्रतिपादन होता है वह तर्कशास्त्रीय निषेध है। इसे भाषा शास्त्रीय निषेध भी कहा जाता है क्योंकि वाक्य में प्रयुक्त शब्दों के अर्थ का विश्लेषण कर उद्देश्य - विधेय में मेल का नहीं होना बतलाया जाता है। स्पष्ट है कि निषेध को कम - से - कम दो अर्थ हैं तत्वमीमांसीय निषेध तथा तर्कशास्त्रीय या भाषाशास्त्रीय निषेध। भारतीय न्याय दर्शन भाषाशास्त्रीय या तर्कशास्त्रीय अर्थ के रूप में निषेध को स्वीकारता है। जहाँ तक बौद्ध दर्शन का प्रश्न है बौद्ध दर्शन में भी निषेध का स्वरूप तत्वमीमांसीय और तर्कशास्त्रीय दोनों रूपों में दीखता है। वस्तुतः बौद्ध - दर्शन निषेध को एक तर्कशास्त्रीय पद्धति के रूप में अपनाकर 'सामान्य' नामक परमतत्व की व्याख्या करता है। साथ ही निषेध की विधि द्वारा ही शब्द और अर्थ का सम्बन्ध बतलाया है। अतः कहा जा सकता है कि बौद्ध दर्शन में निषेध एकतात्मक विधि के रूप में अपनाया गया है।